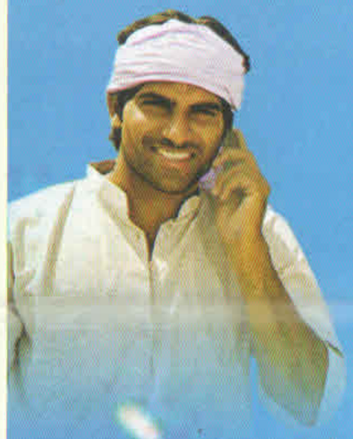

कृषि संबंधी जानकारी हेतु
डायल करें
1551 या 18001801551
(दोनो नं. निःशुल्क है)

कृषि एवं सहकारिता विभाग कृषि मंत्रालय भारत सरकार द्वारा जनहित में जारी

मार्गदर्शन – जिला पदाधिकारी–सह–अध्यक्ष (आत्मा) जहानाबाद
प्रकाशन – परियोजना निदेशक आत्मा, जहानाबाद

मुद्रक : राजधानी लिथो आर्ट प्रिंटींग प्रेस, ऑफिस– बड़हिया, ब्रांच ऑफिस– पटना, मो०: 9304103279

बिहार सरकार
कृषि विभाग

पशुपालन
एवं दुध उत्पादन

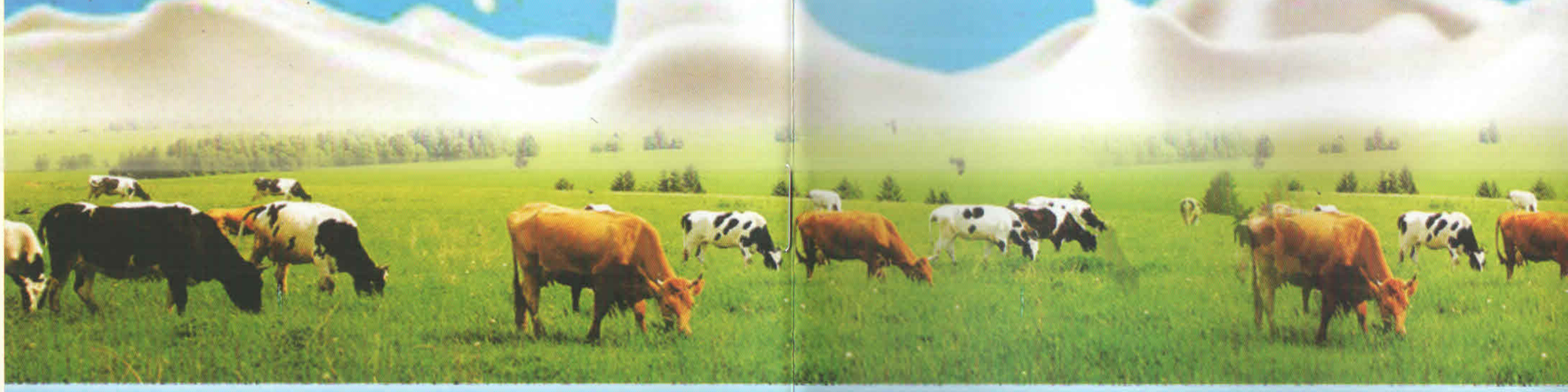

प्रकाशक :
कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंध अभिकरण (आत्मा) जहानाबाद

पशुपालन एवं दुध उत्पादन

वैदिक युग से भारत में पशुपालन की व्यवस्था रही है । पशुओं को पालने बहुत सारे उद्देश्य है। मुख्य रूप से पुशओं से दूध के विभिन्न उत्पाद प्राप्त करने के साथ–साथ खेत की जुताई, मांस,ऊन एवं खाद्य के लिए पालन किया जाता है । पशुपालक एक–दो गाय, भैस, बकरी अन्य दूसरे पशुओं को रखकर अपनी आवश्यकता को पूर्ति करता है। दूसरे व्यवसाय स्तर पर डेयरी संचालन एवं दूसरे कार्यो के लिए करते हैं । पशुपालन कुषि क एक मजबूत स्तंभ है । खेती वगैर पशुपालन के संभव नहीं है और मान स्वास्थ्य के लिए भी पशुपालन व एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है । भारत में वर्तमान में पशुपालन एक व्यवसाय के रूप में उभर रहा है । बहुत सारे किसान एव बेराजगार युवक पशुपालन से एक व्यवसायी के रूप में उभर रहे हैं। पशुपालन को कई चरणों में देखा जा सकता है । जैसे गाय पालन, भैस पालन, बकरी पालन, भेड़ पालन, सुअर पालन, इत्यादि । गाय तथा बैल भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था की मूलाधार है । अच्छी खेती तथा अच्छे स्वास्थ्य के लिए हमें अच्छे बैलों तथा बढ़िया किस्म की दुधारू गायों की आवश्यकता है । देश की अधिकांश आबादी शाकाहारी है । इसलिए दूध के उत्पादन को बढ़ाना अत्यंत ही आवश्यक है । साथ ही यह भी जरूरी है कि गौ पशुओं में भार ढोने के गुणों में भी किसी तरह की कमी नहीं आयी । गाय को दूध प्राप्ति के लिए किसानों द्वारा पालन किया जाता है । साथ ही हमारे विभिन्न संस्कारों में दूध व अन्य उत्पाद की विशेष महत्व है। इसलिए गाय पालन पर अधिक जोर दिया जाता है । किसी भी प्रदेश के आर्थिक विकास में पशुओ का विशेष योगदान रहा हैं हमारे देश में भी वही प्रदेश अधिक उन्नति कर सके हैं जहां अच्छे कृषि कार्य करने वाले व अधिक दूध देने वाले पशु पाये जाते हैं

पशुपालन के मुख्य स्तंभ

वैज्ञानिक प्रयोगों व अनुभवों द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि पशुपालन निम्न बिंदुओं पर ध्यान दें तो पशुपालन एक लाभदायक उद्योग साबित हो सकता है। जिसके लिए निम्न पहलुओं विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

2. संतुलित आहार

3. आवास प्रबंधन

4. उन्नत नस्ल का चुनाव

पशु स्व जिस प्रकार बीज के लिए खाद, पानी की आवश्यकता होती हैं, इंजन को चलाने के लिए भाप या डीजल की आवश्यकता होती है उसी प्रकार पशुओं को जीवित रहने तथा शारीरिक वृद्धि एवं उत्पादन के लिए आहार चारा /बांटा की आवश्यकता पड़ती हैं। अतः पशु का आहार ऐसे पौष्टिक तत्वों का होना चाहिए जिससे उसकी आवश्यकतानुसार उसे सभी पोषक तत्व मिल सके।

जीवन निर्वाह के लिए

हृदय, फेफड़े, पाचन क्रिया आदि के कार्यो को चलाए रखने के लिए शरीर का तापक्रम बनाए रखने के लिए, शरीर में टूट–फूट की मरम्मत के लिए, शरीर को चलाने के लिए आवश्यक खनिज व विटामिन प्रदान करने के लिए।

उत्पादन प्रजनन आदि कार्य के लिए

दूध उत्पादन के लिए ग्याभिन गाय के गर्भ के बढ़वार के लिए, बछड़े बछड़ियों के लिए, बछड़ियों के बढ़वार व जल्दी व्यस्क होने के लिए जिससे जल्दी गाय बने, बैलों को भार ढ़ोने, कृषि कार्य आदि करने के लिए। यदि पशुओं को उचित समय पर आवश्यकतानुसार संतुलित आहार नहीं मिलेगा या कुपोषण रहेगा तो : गाय की दूध उत्पादन शक्ति कम हो जाएगी। गाय समय पर गर्मी में नहीं आएगी, गर्भधारण नहीं कर सकेगी, यदि गर्भ ठहरेगा भी तो गर्भपात हो सकता है। यदि गर्भपात नहीं भी हो तो बछड़ा /बछड़ी कमजोर /अस्वस्थ पैदा होंगे। जननेन्द्रिय संबंधी विकार हो सकते हैं। बछड़ियों की बढ़वार रूक जाएगी जिससे ज्यादा उम्र में बछड़ी गाय बनेंगी। पशु कमजोर हो जाएगा व शरीर में बीमारियों से बचाव करने की शक्ति कम हो जाएगी व पशु प्रायः बीमार रहेगा। साँड़ो में लिंग के प्रति उत्तेजना कम हो जाती है व शुक्राणओं में निष्क्रियता होने की संभावना रहती है। खेती व भार ढोने में काम आने वाले बैलों की कार्य क्षमता कम हो जातीं है।

अतः गौ पशुओं को समय पर संतुलित आहार देना बहुत आवश्यक है, वरना दूधा उत्पादन एवं प्रजनन व कार्य क्षमता कम होने से पशु लाभदायक नहीं रहेगा। पशुओं को सुखे चारे पर रखकर ग्वार/ग्वार चूरी या कोमा या मात्र बिनौला खिलाना संतुलित आहार नहीं है व महंगा है। पशु शरीर के विकास मे निम्नलिखित पदार्थो की अहम् भूमिका है।

1. प्रोटीन

शरीर को पूर्ण रूप से विकसित करने एवं मांसपेशियाँ बनाने में प्रोटीन का विशेष महत्व हैं यह पशुओं में दूध, खाल, बाल, खुर, सींग तथा पाचक रसों को भी बनाने का कार्य करती है। यह विभिन्न प्रकार की खलियों एवं दलहनी फसलों में पायी जाती है। इसकी कमी से

अपच, दूध उत्पादन में कमी, गर्मी में नहीं आना, बाल झड़ना, पशु के शरीर की बढ़त रूक जाना इत्यादि रोग उत्पन्न हो जाते है। पशु शरीर को 16–17 प्रतिशत प्रोटीन की आवश्यकता होती है।

2. कार्बोहाइड्रेट

यह पशु शरीर को आवश्यक ऊर्जा प्रदान कर ताकतवर बनाता है। यह सभी प्रकार की गैरदलहनी फसलों जैसे – जई, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का, इत्यादि में पाया जाता है। पशु शरीर को 42–45 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट की आवश्यकता होती है। आवश्यकता से अधिक होने पर यह पशु शरीर में चर्बी के रूप में जमा हो जाती है। शरीर में कार्बोहाइड्रेट की कमी होने पर यह ऊर्जा देने का कार्य करती है।

3. वसा

यह शरीर में शक्ति एव नमी बनाये रखने के लिए आवश्यक है। इसकी पूर्ति खल्ली, तेल बिनौले हरे चारे इत्यादि से की जा सकती है। इसके अभाव में त्वचा खुश्क, दूध में चिकनाई कम एवं चर्म रोग इत्यादि हो जाते हैं।

4. विटामिन

यह शरीर में रोगों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता विकसित कर कई बीमारियों से बचाने का काम करता है। इसके मुख्य स्त्रोत विभिन्न किस्म के हरे चारे हैं। इसकी कमी से बांझपन, खून की कमी, अंधापन, कमजोरी, शरीर की बढ़त में कमी तथा चर्म रोग हो जाते हैं।

5. खनिज पदार्थ

पशुओं के शरीर में 3–5 प्रतिशत खनिज पदार्थ पाये जाते हैं जो हड्डियों को मजबूत करने, प्रजनन एवं पाचन शक्ति बढ़ाने खून बनाने, कोमल तंतुओं का विकास करने एवं मेटाबॉलिज्म को नियंत्रित

करने के लिए बहुत आवश्यक है। इसकी कमी पशु की बढ़ोतरी, उत्पादन क्षमता तथा प्रजनन चक्र को प्रभावित करती है। अधिक दूध देने वाले पशुओं में शरीर से अधिक खनिज पदार्थो के निकल जाने से इन पदार्थो की कमी हो जाती है जिसे बाजार में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के खनिज मिश्रणों द्वारा पूरा किया जा सकता है। इन पदार्थो मे मुख्य रूप से निम्नलिखित तत्व पाये जाते हैं।

(अ) कैल्शियम

यह शरीर में पाये जानेवाले खनिज तत्वों में सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है। यह बच्चों की हड्डी तथा दाँतों के निर्माण एवं व्यस्कों में दूध–उत्पादन के लिए बहुत जरूरी हैं पशु शरीर में यह मुख्यतः फास्फेट के रूप में अस्थियों में पाया जाता है। इसकी कमी से बच्चों में रिकेट्स तथा व्यस्कों में आस्टोमलेशिया नाम की बीमारी हो जाती है। दुधारू पशुओं में ब्याने के बाद इसकी कमी से मिल्क फीबर हो जाता है। अतः गाभिन एवं दुधारू पशु को पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम अवश्य देना चाहिए।

(ब) फास्फोरस

यह भी दांतों एवं हड्डियों के लिए बहुत आवश्यक तत्व है। पशु रक्त में कैल्सियम प फास्फोरस अवश्य रहना चाहिए। फास्फोरस का मख्त स्त्रोत दाल, चोकर, खल्ली, हड्डी का चूर्ण, दूध इत्यादि है।

(स) सोडियम, पोटैशियम

ये तत्व पशु शरीर में क्लोराइड तथा सल्फेड के रूप में पाये जाते है। ये भूख, माँसपेशियों की मजबूती मेंटावाल्जिम तथा तन्त्रिका तंत्र को प्रभावित करते हैं। इनकी कमी से पशु का दुबला होना, खाना कम करना, कोर्निका में खुरदान आना, बार–बार पेशाब करना तथा पेशाब पीना इत्यादि लक्षण दिखायी देने लगते हैं। सोडियम का सबसे अच्छा स्त्रोत नमक तथा साल्ट ब्रिक हैं।

(ढ) आयरन एवं कॉपर

रक्त में हीमोग्लोबीन बनाने के लिए आयरण या लोहा महत्वपूर्ण तत्व है। इसकी कमी से एनीमियर हो जाता है जिसमें शरीर भार में कमी, शरीर सूजना, दस्त होना, बढ़त रूक जाना इत्यादि समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है यह हरे चारों के माध्यम से पशु को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराया जा सकता है। शरीर में कॉपर या तांबे की कमी से हड्डी का बार–बार टूटना, प्रजनन में अनियमिताएँ, खुजली, तेज दस्त, भूख में बांझपन, समय से जेर नहीं निकलना इत्यादि दोष उत्पन्न हो जाते हैं। इसे विनौले के चूर्ण या मछली के चूरे द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

(इ) सल्फर

यह शरीर में पाये जानेवाले बहुत से प्रोटीन एवं विटामिनों का एक महत्वपूर्ण भाग हैं इसकी कमी से शरीर में प्रोटीन की कमी हो जाती है।

(ई) मैग्नीशियम

यह ऑक्साइड, क्लोराइड तथा सल्फेट के रूप में 70 प्रतिशत हड्डियों एवं 30 प्रतिशत मुलायम ऊतकों में पाया जाता है जो प्रोटीन संश्लेषण तथा मेटाबॉल्जिम को नियंत्रित करने के लिए बहुत आवश्यक हैं इसकी कमी दुग्ध–उत्पादन को प्रभावित करती है।

सामान्य अवस्था में पशु अपने प्रतिदिन के सामान्य आहार से ही पर्याप्त खनिज पदार्थ प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु जब गाय/भैंस गाभिन रहती है या दूध देने की अवस्था में होती है उस समय उसके अतिरिक्त खनिज पदार्थो की आवश्यकता होती है, क्योंकि उसके शरीर का बहुत सा खनिज पदार्थ बच्चे को विकसित करने एवं दूध बनाने में खर्च हो जाता है अत: गाभिन गाय/भैंस को गर्भ में पाँचवे माह से प्रतिदिन 25–30 ग्राम तथा दूध देने वाले पशुओं को 30–50 ग्राम खनिज

मिश्रण अवश्य देना चाहिए। इसके अतिरिक्त पशु का नमक दलहनी अनाज हरा चारा, चोकर खली इत्यादि भी खिलाना चाहिए। पशुओं को अपने शरीर के लिए पौष्टिक तत्वों से भरपूर संतुलित आहार की आवश्यकता पड़ती है जिसे वह भूसा, पुआल , हरे चारे, दाना–खल्ली एवं पानी द्वारा प्राप्त करता है।

विशेष

प्रति 3 लीटर दूध पर 1 किलो दाना देना चाहिए। इसके साथ–साथ पशु शरीर के 100 किलो वजन पर 500 ग्राम अतिरिक्त दाना भी उसे मिलना चाहिए। अन्तिम दो महीनों में प्रतिदिन 2 से 3 किलो दाना तथा 30–40 ग्राम खनिज मिश्रण अवश्य देना चाहिए, दलहनी तथा गैर दलहनी चारों को एक साथ मिलाकर पशु को खिलाना चाहिए। यदि पर्याप्त मात्रा में हरा चारा उपलब्ध है तो दाने की मात्रा कम कर खिलाई को किफायती बनाया जा सकता है , गाभिन गाय को गर्भ ठहरने के छठे या सातवें महीने से 2 किलो अतिरिक्त दाना देना चाहिए, सूखा चारा यूरिया से उपचारित कर खिलाना चाहिए, किसानों में यह भ्रम है कि दूध देती गाय गर्मी में नहीं आती तथा दूध देते गाय को ग्याभिन करा देने से दूध से टल जायेगी। ब्याने के बाद प्राय: एक स्वस्थ गाय 45–6 दिन के अन्दर गर्मी में नहीं जाती है अत: प्रथम गर्मी को छोड़ कर द्वितीय गर्मी पर गाय को अवश्य ग्याभिन करावें। यदि एक गर्मी को बेकार जाने दिया तो ब्यांत अन्तर जितना बढ़ जाएगा इससे पशुपालक को उतना ही नुकसान होगा। एक गाय तभी लाभदयाक हो सकती है जब उसके दो ब्यांत का अन्तर 13–14 माह रहे व यह तब ही संभव होगा जब गाय को ब्याने के 2–3 माह के अन्दर ग्याभिन करा दें। गाय के ब्याने के दो माह पूर्व से ब्याने तक सामान्य खुराक के अतिरिक्त 1 किग्रा. दाना अवश्य दें।

बच्चा देने के बाद गाय को हल्के सुपाच्य, शक्तिवर्द्धक, आहार की आवश्यकता होती है अत: प्रथम एक सप्ताह तक कम से कम 500

ग्राम गुड़, 500 ग्राम बाजरे का दलिया, 100 ग्राम मेथी, 20 ग्राम अजवाईन, 50 ग्राम नमक व 40 ग्राम खनिज लवण अवश्य दें । जनम के तुरंत बाद बछड़े/बछड़ी की नाल को शरीर से 2 ईंच छोड़कर ऊपर घुमाकर काट दें डोरे से बांध दें व सिरे पर टिचर बेन्जीन/आयोडीन का फोया लगावें । ब्याने के बाद गाय के धन, योनि, पिछले पैर आदि कीटाणु नाशक दवाई, लाल दवाई का पानी डालकर अच्छी तरह साफ करें । ब्यानें के एक घण्टें के अन्दर बछड़ा/बछड़ी को प्रथम दूध जिसे 'खीस' कहते हैं पिलावें । यह बहुत ही पोषक तथा प्रकृति द्वारा श्रेष्ठ संतुलित आहार है जो सवादिष्ट और पाचक है बच्चे के लिए अमृत तुल्य है। इससे बछडो में बीमारी से रक्षा करने की शक्ति प्राप्त होती है वैज्ञानिक परीक्षणों से यह प्रमाणित हो चुका है कि इसकी श्रेष्ठता 6 घण्टे तक है, जितना देरी से मिलेगा उतनी ही गुणवत्ता कम हो जाएगी । अंगूठे के दबाव के दूध निकालने से थन खराब हो जाते है व गाय को दर्द होता है अत: दूध काढ़ने में 'पूर्ण हस्त विधि' का प्रयोग करें इस विधि में थन को मुट्ठी में पकड़कर, थन की जड़ को अंगूठे की परिधि द्वारा दबाकर बन्द करने तथा थन को निचोड़ कर दूध निकाला जाता हैं स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए यह आवश्यक है कि ग्वाले के साथ दुहने से पूर्व अच्छी तरह साफ हो । गाय के थन,, गादी आदि लाल दवा के पानी से साफ करें । पानी का टांका, जहां से पशु पानी पीते है साफ हो। सप्ताह में एक बार टांके की अन्दर की दीवार पर चूना लगाने से पानी साफ रहेगा । बाड़ा सूखा व हवादार हो । गीली जगह पर फिनाईल व सूखी जगह पर चूना छिड़कते रहना चाहिए। जहा पीने के लिए खारा पानी नहीं है पानी में नमक मिलाने से पशु चाव से पानी पियेगा व पाचन क्रिया ठीक रहेगीं एक गाय को 30 ग्राम प्रतिदिन के हिसाब से नमक दिया सा सकता है । प्रतिकुल परिस्थितियों (सदी,गर्मी वर्षा एवं लू इत्यादि) से बचाव एवं बेहतर पशु प्रबंधन की दृष्टि से दुधारू पशुओं के लिए उचित पशुगृह की व्यवस्था करना अत्यन्त आवश्यक हैं वैज्ञानिक आवास प्रबंधन से उनकी उत्पादकता बढ़ायी जा सकती हैं ।

पशुशाला बनाते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए

पशुशाला पानी वाले स्थानों से दूर ऊँची सूखी जगह पर होना चाहिए, यह हवादार दिन भर सूर्य की रौशनी से परिपूर्ण, शहर से नजदीक, बाजार से जुड़नेवाले मुख्य मार्ग के समीप होनी चाहिए ताकि पशुआहार लाने या दूध को शीघ्र नजदीक के बाजार/शहर पहुँचाने में कोई असुविधा न हों, पशुगृह का घेरा इतना बड़ा अवश्य हो कि पशु को शरीर घुमाने या बैठने में कोई असुविधा नहीं हो, दरवाजे एवं नाद इस प्रकार बने हो कि चारा आसानी से खिलाया जा सके, गोशाले का फर्श ढलवाँ एवं चिकनाई रहित होना चाहिए । पानी के निकास का उत्तम प्रबंध होना चाहिए जिससे मल–मूत्र उसमें या उसके आसपास इकट्ठा नहीं होने पाए, चारा काटने, रखने तथा गाभिन पशुओं एवं बछड़ों के रहने का स्थान अलग होना चाहिए, पशुशाला निर्माण सस्ता होना चाहिए, पशुगृह के पास हर समय स्वच्छ, ताजे पानी एवं रौशनी की व्यवस्था होनी चाहिए, पशुगृह के चारो और छायादार वृक्ष होने चाहिए, गोशाला हमेशा मनुष्यों के रहने के स्थान से दूर बनाना चाहिए।

पशुशाला दो प्रकार की होती है

1. खुली पशुशाला

2. बन्द पशुशाला

1. खुली पशुशाला

यह पशुशाला चारो तरफ चहारदीवारी से घिरी होती है जिसमें पशु स्वच्छन्द घूमते हैं । पशु सिर्फ दुहने के समय बांधा जाता है। वर्षा एवं धूप से बचाव के लिए एक तरफ की दीवार पर छप्पर डालकर शेड बना दिया जाता है। नाद या तो खुले में या शेड के अन्दर बनाया जाता है। खुले आंगन में स्वच्छ एवं ताजे पानी के लिए हौज बना देते है । आंगन में कुछ छायादार बड़े पेड़ भी लगा दिये जाते हैं।

खुली पशुशाला से लाभ

पशुशाला कम खर्चीली है, पशुओं की संख्या बढ़ने पर इसे आसानी से बढ़ाया जा सकता हैं, पशु दिन भर अपनी इच्छानुसार घुम फिर सकते हैं। इससे उनका शारीरिक व्यायाम अच्छी तरह होता है,

व्यायाम के कारण शारीरिक विकास अच्छा होने से दुग्ध उत्पादन भी ठीक ढंग से होता है, मद में आए मवेशी की पहचान आसानी से की जा सकती है।, पशुओं में लंगड़ापन, टांस, खुरों तथा पिछले पैर के जोड़ों का घाव, थनों में चोट इत्यादि लगने की संभावना कम हो जाती है, एक साथ कई जानवरों का अच्छा एवं सस्ता प्रबंधन किया जा सकता है । श्रम की भी बचत होती है, आग लगने से पशु जीवन को कम खतरा होता है ।

खुली पशुशाला से हानियाँ

शारीरिक रूप से कमजोर पशुओं का चारा ताकतवर पशु खा जाते हैं जिससे वे और कमजोर हो जाते हैं, पशुओं के आपस में लड़ने की संभावना अधिक रहती है, मद में आया जानवर दूसरे जानवरों को तंग करता है, पशुशाला बनाने के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता पड़ती है।

बन्द पशुशाला

इस विधि से बनायी गयी पशुशाला चारो ओर से बन्द होती है। पशु को इसमें बांधकर रखा जाता है तथा स्टॉल फीडिंग करायी जाती है ।

बंद पशुशाला से लाभ

कम स्थान की आवश्यकता पड़ती है, सभी पशुओ के लिए अलग–अलग नांद की व्यवस्था होती है । अपने नांद पर खूंटे से बंधे होने के कारण ताकतवर पशु कमजोर पशु का चारा नहीं खा पाता है, पशु आपस में नहीं लड़ते, बीमारियों का पता आसानी से लगाया जा सकता है, अधिक सर्दी, गर्मी एवं बारिश से सुरक्षा होती है, संक्रमण से पशुओं की सुरक्षा होती हैं ।

बंद पशुशाला से हानियाँ

पशु संध्या बढ़ने पर अलग से गोशाला बनाने की आवश्यकता पड़ती है, पशु स्वतंत्र घुम नहीं पाते इसलिए उसका शारीरिक व्यायाम नहीं होने से विकास अच्छी तरह नहीं हो पाता है, स्वास्थ्यपरक परिस्थिति बनाए रखना कठिन होता है, बीमारियाँ जल्दी होती है, घर बनाना खर्चीला होता है, बन्द पशुशाला में अधिक जानवर एक साथ नहीं रखे जा सकते, प्रत्येक पशु को 20′ से 24′ स्थान की आवश्यकता होती हैं नाद बनाते समय किनारा गोल और चिकना बनाना चाहिए ताकि पशु को चोट नहीं लगे।

एक जाति के पालतु पशुओं के उस समूह को नस्ल कहते हैं जिसके सदस्यों में एक विशेष प्रकार का समान गुण हो जिसके आधार पर उन्हें पशुओं से अलग पहचाना जा सके । इन विशेष लक्षणों के आधार पर दुधारू पशुओं का चुनाव किया जाता है भारतवर्ष में गायों की लगभग 26 तथा भैंसों की 7 प्रजातियाँ हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अधिक दूध देने वाली विदेशी नस्लें भी हैं जिनका देशी नस्लों के साथ संकरण कर अधिक दूध देने वाली संकर नस्लें तैयार की जाती है । देशी गाय की नस्लों में साहिवाल, लाल सिंधी, थारपारकर, कॉकरेज, गीर, अमृतमहल, देवनी, गावलालव, हल्लीकर, हरियाणा, कृष्णा घाटी, नागौरी इत्यादि प्रमुख हैं।

गायों की प्रमुख नस्ल

देशी नस्ल

1. साहिवाल

यह लम्बे सिर, छोटे सींग लाल रंग, मध्यम श्रेणी के आकार, ढीले चमड़े एवं लम्बे थनोंवाली नस्ल है जो प्रति ब्याँत (300 दिन) 3200 लीटर दूध देने की क्षमता रखती है।

2. थारपारकर

यह थार के मरूस्थल एवं कच्छ में पायी जानेवाली गठीले शरीर, लम्बा चेहरा, मध्यम आकार के सींग, लम्बे काले गुच्छों से युक्त पूँछ एवं बड़े कान वाली गाय है जो प्रति ब्याँत 2000 लीटर दूध देती है जिसमें चिकानाई का मात्रा 4.5 प्रतिशत है।

3. लाल सिंधी

यह पाकिस्तान के सिन्ध प्रान्त में पायी जानेवाली गहरे लाल एवं भूरे रंग की मध्यम आकार की गाय है जिसकी सींग छोटा तथा कान बड़ा होता है। यह प्रति ब्याँत लगभग 1900 लीटर दूध देती है।

4. गीर

यह गुजरात के गीर पहाड़ियों में पायी जानेवाली सफेद चित्तियों से

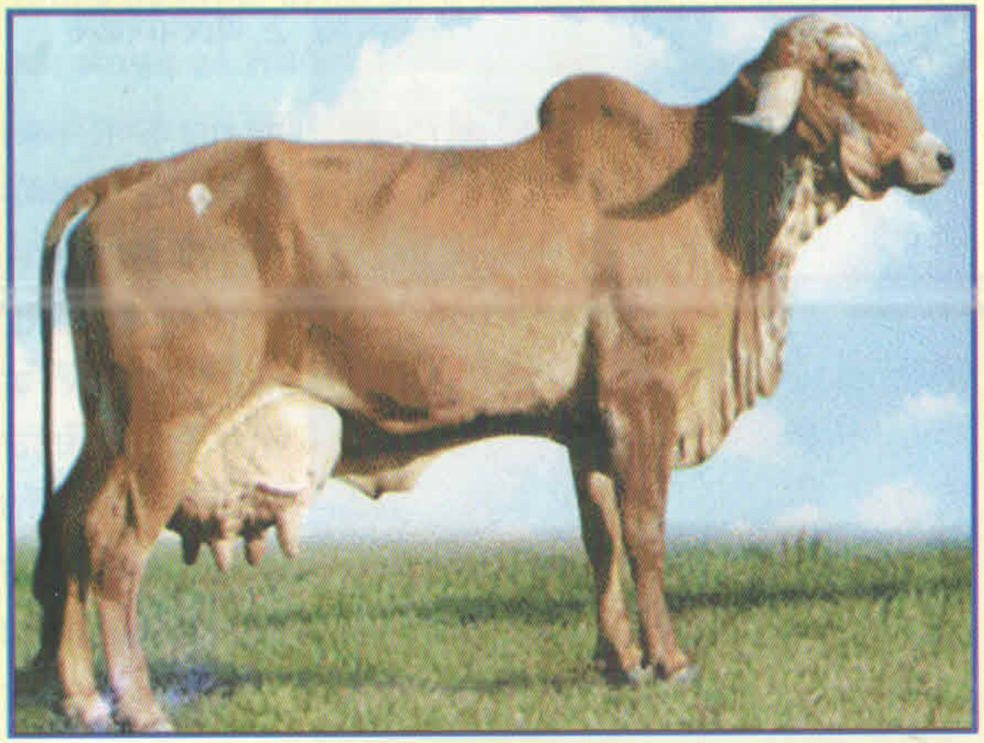

युक्त लाल रंग की मध्यम आकार की गाय है जिसका सींग मझौला, पीछे की ओर मुड़ा हुआ कान लम्बे लटकते हुए एवं पूँछ कोड़े जैसी होती है। यह प्रति ब्याँत लगभग 1700 लीटर दूध देती है।

5. हरियाणा

हरियाणा में पायी जानेवाली इस नस्ल की गाय का रंग सफेद या हल्का धूसर, चेहरा लंबा एवं माथा चौड़ा, सींग छोटा अन्दर की तरफ मुड़ा हुआ और पूंछ गुच्छायुक्त लम्बी होती है। ये एक ब्याँत में लगभग 1135 लीटर दूध देती है।

विदेशी नस्ल

1. जर्सी

इस नस्ल का मूल स्थान जर्सी द्वीप है इनका रंग हल्का लाल या बादामी होता है जिस पर सफेद रंग के धब्बे होते हैं। सींग छोटे अंदर की ओर मूड़े हुए तथा माथा, कंध एवं पीठ समतल होता है। ये 26–30 माह के भीतर बच्चा देती है। तथा ब्यातांतर भी 13–14 माह का होता है। इनका औसत दूध उत्पादन 4500 लीटर प्रति ब्याँत है जिसमें चिकनाई 4.5 प्रतिशत तक होती है।

2. होल्स्टीन फ्रीजियन

मूल रूप से नीदरलैण्ड में पायी जानेवाली होल्स्टीन फ्रीजियन नस्ल की गाये बहुत बड़ी काले एव सफेद रंग की होती है। यह संसार की सबसे अधिक दूध देनेवाली नस्ल है जिसका औसत दूध उत्पादन 6000 से 7000 लीटर प्रति ब्याँत हैं इसमें चिकनाई की मात्रा अपेक्षाकृत कम 3 से 3.5 प्रतिशत तक होती है। इनका पिछला भाग चौड़ा, नथुने खुले एवं कान मध्यम आकार के होते हैं।

3. ब्राउन स्विस

इनका मूल स्थान स्विटजरलैण्ड है। ये बड़े डील–डौल वाली हल्के भूरे रंग की होती है जिनकी पीठ तथा गर्दन ऊपर से सीधी होती है। ये प्रति ब्याँत 5000 से 5500 लीटर तक दूध देती है। इनकी बछड़ियाँ 28 से 30 माह की उम्र तक पहला बच्चा दे देती है।

4 आयर–शायर

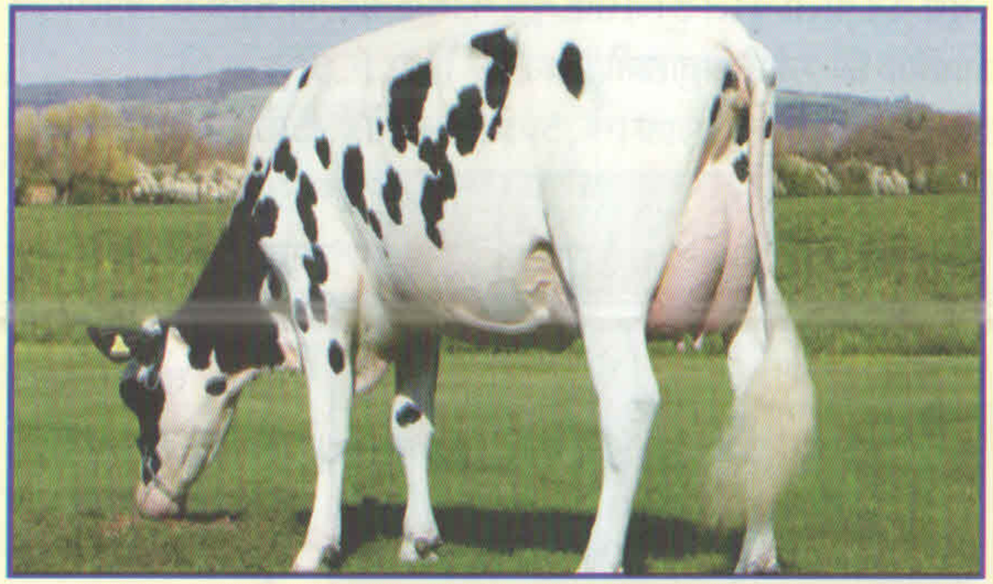

यह मूलरूप से ब्रिटेन में पायी जानेवाली लाल या भूरे रंग एवं मझौले आकार की गाय है जिसका सींग माथे से निकलकर ऊपर की ओर उठा हुआ होता है।

भैसों की प्रमुख नस्ल

1. मुर्राह

इस नस्ल की भैंसों का मूल स्थान हरियाणा तथा पंजाब के पश्चिमी इलाके हैं ये विशाल गहरे काले रंग, घुमावदार सींग, मुँह पैर एवं पूँछ सुनहरे बालों के गुच्छों से भरे हुए, ऊँचाई में छोटी, आगे की तरफ पतली एवं पीछे से भारी होती है। यह तीन साल में बच्चा तथा प्रति ब्याँत 2000 लीटर दूध देने वाली नस्ल है जिसके दूध में चिकनाई की मात्रा भी अपेक्षाकृत अधिक 6–7 प्रतिशत होती है।

2. जफराबादी

इस नस्ल की भैसों का शरीर भरी भरकम लम्बा, गलकम्बल पूर्ण

विकसित, सिर एवं गर्दन तथा ललाट उभरा हुआ होता है। ये भेसों में सर्वाधिक दूध देने वाली सबसे अच्छी नस्ल मानी जाती है।

3. मेहसाना नस्ल

इन भैंसों का आकार मध्यम, थूथन चौड़ा, नथुने खले हुए तथा रंग काला होता है। ये प्रति ब्याँत 2000 लीटर तक दूध दे सकती है। इनकी गर्दन पतली, पीठ सीधी, सींग छोटे मुड़े हुए एवं स्तन लंबे होते है। शरीर मध्यम आकार का होने के कारण खिलाई–पिलाई कम खर्चीला होता है।

4. नागपुरी भैंस

दक्षिण भारत में पायी जानेवाली नागपुरी नस्ल की भैंसों का कद ऊँचा, पूंछ छोटी, सींग लम्बे चपटे, रंग काला एवं चेहरा लम्बा तथा पतला होता है। इनका औसत उत्पादन 1500 लीटर प्रति ब्याँत है।

5. सुरती

इन नस्ल की भैंसों का विकास गुजरात के खेड़ा एवं बड़ौदा जिलों में हुआ है। इनके शरीर का आकार उत्तम, कद मझौला, सिर लम्बा, सींग बीच में गोल हंसिया जैसे लम्बे और चपटे, रंग भूरा या हल्का काला एवं जबड़े तथा छाती पर दो सफेद धारियाँ पायी जाती है। इनका औसत उत्पादन 1800 लीटर प्रति ब्याँत है।

6. भदावरी या इटावा नस्ल

ये उत्तर प्रदेश के इटावा जिले में पायी जाती है। इनका शरीर मझौले आकार का आगे की ओर पतला तथा पीछे चौड़ा होता है। इनका रंग तांबे जैसा एवं पूँ पतली लम्बी होती है। इनका दैनिक औसत लगभग 4 किलो है। पशु स्वास्थ्य रक्षा व्यवसायिक पशुपालन का एक मुख्य आधार स्तंभ माना जाता है। अत: इस पर पशुपालकों को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। संक्रामक एवं असंक्रामक बीमारियों की समय

रहते चिकित्सा कराने से पशुओं की उत्पादकता दृष्प्रिभावित नहीं होती है। अन्यथा जरा सी लापरवाही से इनका दुरगामी दुष्परिणाम किसानों को भुगतना पड़ता है।

पशुओं को स्वास्थ्य रखने के लिए पशु टीकाकरण को ससमय पालन करना फायदेमंद रहता है। गलाघोंटू, खुरहा–मुँहपका, लंगड़ी बुखार थैलेरियेसीस आदि रोगों का कारगर टीका बाजार में उपलब्ध हैं पशुपालकों को नियम समय पर टीकाकरण करवाना चाहिए। उपरोक्त सभी स्तंम्भों की विस्तृत चर्चा आगे के अध्यायों में भी की जा सकती है।

पशुपालकों को पशुओं की प्राथमिक चिकित्सा की जानकारी बहुत आवश्यक है जिससे अनेकों पशुरोग व परेशानियाँ जिसकी तुरंत चिकित्सा से पशु की जान बचायी जा सकती है । हम अक्सर देखते हैं कि पशु की दुर्घटना हो जाती हैं, खरोच से घाव हो जाता है, पैरों में मोच आ जाती है, नाक से खून आने लगता है या जल जाता है। ऐसी स्थिती में प्राथमिक चिकित्सा करके पशु चिकित्सक करके पशु चिकित्सक के आने तक पशु की हालत खराब होने से बचायी जा सकती है । अत: प्राथमिक चिकित्सा का ज्ञान होना सभी पशुपालकों के लिए आवश्यक हो जाता है ।

खरोच आना

पशुओं में खरोच के घाव किसी काटकेदार तार से, डंडे से, किसी पशु के लड़ने से या किसी अन्य खरोच युक्त दीवार आदि से रगड़ने से हो सकती है। ऐसी स्थिती में पहले साफ पानी 0.1 प्रतिशत लाल दवाई (1000 भाग पानी में 1 भाग पोटेशियम परमैग्नेट) से अच्छी तरह धुलाई करें । इसके बाद उस पर 4–8 प्रतिशत मरक्यूरोक्रोम का घोल या टिंचर आयोडीन या टिंचर फेरी परक्लोर को रूई में भींगोकर लगायें तथा कसकर पट्टी से बाँध दें । कुछ घाव जो पुराने हो जाते हैं और उनमें कीड़े भी पड़ जाते हैं, ऐसी स्थिती में उन घावों पर फिनाईल लगी रूई या तारपीन के तेल और क्लोफार्म को मिलाकर भर दें । कीड़ों को चिपटी से निकाल कर उसमें मेगीसाइडल क्रीम लगाने से 4–5 दिनों में घाव भर जाता है ।

पैरों में मोच आना

प्राय: फिसल कर गिर जाने से पशुओं के पैरों में मोच आ जाती है जिसमें पशु लँगड़ा कर चलने हैं। मोच वाली जगह गर्म रहती है और

पशु चलने में परेशानी महसूस करता है । मोच वाले भाग को ठण्डे पानी से अच्छी तरह धोना चाहिए । मोच वाली जगह पर डिक्लोफेनिक जेल अथवा अमोनिया–कैम्फर लिनिमेंट से दिन में दो बार मालिश करने पर लगभग एक सप्ताह में पशु को काफी आराम हो जाता है। यह ध्यान रखना जरूरी है कि पशु को कम से कम चलाएँ ।

हड्डी टूटना

कई बार पशुओं के गिरने से या पैरों के किसी गढ्ढे में फँस जाने से हड्डी टूट जाती है । जैसे ही हड्डी टूटने का पता चलता है पशु को चलने से तुरंत रोकना चाहिये । टूटे हुए दोनों भाग को आमने–सामने मिलाकर बाद्स की खपचियाँ बांध देनी चाहिए। यह सदैव याद रहे की पशु को चलने न दें अन्यथा टूटी हुई हड्डी चमड़ी को छेदती हुई बाहर आ सकती है और गंभीर जटिल चोट बन सकता है। तुरंत पशु चिकित्सक को बुलाना चाहिए जो ठीक से प्लास्टर ऑफ पेरिस की पट्टी लगाकर एवं अन्य जरूरी इलाज करता है। जिसमें पशु 4–6 सप्ताह में ठीक हो जाता है।

सींग टूटना

यदि सींग पूरी तरह से नहीं टूटी है तो उसमें बाँस की खपचियाँ लगाकर उसे ज्यों का त्यों एक ही स्थान पर दबाकर पटटी चारों और से लपेटकर बांध देनी चाहिए । यदि सींग पूरी तरह से टूटकर अलग हो गई है और उससे काफी खून बह रहा है, ऐसी स्थिती में रूई से फाहा एन्टिसेपिटक दवाई लगाकर पट्टी से कसकर बांध देनी चाहिए इससें खून का बहना बन्द हो जाता है। बबूल की गोंद 36 ग्राम, सिन्दूर 24 ग्राम तथा अलसी का तेल 72 ग्राम तीनों को मिलाकर घाव के चारों ओर लपेटकर पट्टी बांधने से भी जल्दी ठीक हो जाता है । यदि फिर भी खून का रूकना बन्द नहीं होता है तो तुरंत पशु चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए ।

खुर का फटना या टूटना

खुर के फटने या टूटने पर सबसे पहले उसे साफ पानी या लाल दवाई से अच्छी तरह साफ कर देना चाहिए जिससे खुर में लगी सारी गन्दगी जैसे गोबर या मिट्टी ठीक से साफ हो जाये। फिर फटे हुए भाग पर ऐन्टिसैप्टिक दवाई लगाकर साफ पट्टी बांध देनी चाहिए। पट्टी हमेशा पासटर्न भाग से बांधनी शुरू करके नीचे खुर तक बांधते हुए अन्त से उसके गाँठ खुर के बाहरी तरफ लगानी चाहिए। जिससे पुनः पट्टी खोलने तथा बांधने में आसानी हो।

रक्त स्त्राव होना

रक्त स्त्राव यदि पूँछ के फटने या टूटने से हो रहा है। तो सबसे पहने पूँछ के टूटे भाग के 10 सेमी. ऊपर किसी रस्सी से कसकर बांध देना चाहिए। जिससे रक्त वाहनियों द्वारा रक्त का आना बन्द हो जाता है और उस रक्त निकलते घाव पर फिटकरी लगाकर पट्टी बांध देनी चाहिए। यदि खून पशु के नाक से निकल रहा हो तो उस पर बर्फ की ठण्डी पट्टियाँ रखनी चाहिए तथा साथ ही साथ फिटकरी के घोल को नाक में डालने पर बहता हुआ रक्त बन्द हो जाता है, तो उसके नाकों में जोक चिपक जाता है और लगातार खून बहता रहता है। ऐसी स्थिति में नाक में नमक का घोल डालने पर जोक की पकड़ ढीली हो जाती है और जोंक या तो अपने आर गिर जाता है या उसके चिमटी की सहायता से आसानी से निकाला जा सकता है।

आँखों में दर्द होना

पशुओं की आँख में धूल के कण, तिनके, चोट लगने, कीड़े या बाल पड़ जाने से दर्द होना शुरू हो जाता है तथा आँखें लाल हो जाती हैं और उसमें सूजन भी आ जाती हैं। पशु के आँख से लगातार पानी बहता रहता है। ऐसी स्थिति में पशु के आँख को ठीक तरह से देखें और यदि कोई तिनका, कीड़ा या धूल का कण आदि है तो उसे निकाल दें और ताजा साफ एवं ठण्डें पानी से हल्का फोव्वारे से आँख की धुलाई

करें। आँख में जिंक सल्फेट या अन्य ऐटिसेप्टिक लोसन को 4–4 बूँद दिन में 3 बार डालें। 3–4 दिनों में आँख पूरी तौर से ठीक हो जायेगी।

जलना

पशु को तुरंत जलते हुए स्थान से अलग हटा देनी चाहिए और बिना देरी किए ठण्डे पानी का फुहारा लगातार जले हुए भाग पर डालते रहना चाहिए। जिससे जलन कम होती है और गर्मी से अन्दर का माँस पकने से बच जायेगा। जले हुए भाग पर शहद 240 ग्राम तथा कमियाँ सिन्दूर 120 ग्राम का लेप बनाकर दिन में तीन बार अच्छा होने तक लगायें या पहले शहद लगाकर बाद में सिन्दूर भी लगा सकते है। बेल का गूदा 480 ग्राम, दही 960 ग्राम तथा पानी 960 ग्राम को अच्छी तरह मिलाकर, छानकर पशु को अच्छे होने तक दिन में 3 बार पिलाना चाहिए। नीली दवाई जो बाजार में उपलब्ध है उसे भी पशु के जले भाग में लगाने पर काफी आराम होता है। ज्यादा जलने पर पशु चिकिसा से भी सम्पर्क करें। इस प्रकार उपरोक्त प्राथमिक चिकित्सा पशु के लिए तुरंत लाभदायक होता है और पशु चिकित्सा के बुलाने तक पशु की हालत बिगड़ने से बचाया जा सकता है।

पशुओं के मुख्य रोग

पशुओं में कुछ ऐसी बीमारी हो जाती है जिसके कारण पशुपालकों को काफी नुकसान उठाना पड़ जाता है। पशुओं में उत्पादन क्षमता घट जाती है। जिसके लिए बीमारियों से बचाव के लिए किसान निम्न तरीकों को अपनाकर लाभ उठा सकते हैं।

अफरा

इस बीमारी में गाय पागुर नहीं करती खाना बंद कर देती है। पेट फूल जाता है। बार–बार पेंट की ओर देखती है। बरसीम या दलहन जाति की हरी घास अधिक मात्रा में खाने से, बासी या सड़े हुए अन्न खाने से यह बीमारी होती है। सही समय पर इसका इलाज नहीं किया

जाए तो 12 से 24 घंटा के अंदर गाय मर सकती है। बीमारी के लक्षण दिखाई देने पर टिम्पोल दवा 80 ग्राम पानी में घोलकर पिलाएं, एविल की सूई 10 एम.एल. मांस में लगवाएं और 200–250 एम.एल. तीसी का तेल पिलाएं जल्द परिणाम के लिए ब्लोटासील या ब्लाटीनेक्स नामक दवा शीशी पर दिये निर्देशानुसार पीलावें जरूरत पड़ने पर डॉक्टर से तुरंत सम्पर्क करें। बचाव के लिए गाय को बासी या सड़ा गला खाना न दें। घास हमेशा पुआल मिलाकर दें।

अपच

अधिक अनाज खाने से यह बीमारी होती है। इसमें पेट की क्रिया मंद हो जाती है। नस की गति भी ढीली पड़ जाती है। मल बदबूदार एवं पतला होने लगता है। कभी–कभी बुखार भी हो जाता है। इसके लिए जरूरी है कि आप ज्यादा चावल, गेहूँ, मकई या शक्कर जाति के अनाज न खिलाए।

दस्त

आमतौर पर यह बीमारी कृमि के कारण होती है। इस बीमारी में शरीर का पानी कम हो जाता है। पतला मल होता है। आंख अंदर की ओर धंस जाती है। कभी–कभी बुखार भी होता है। उपचार के लिए आंत के कीड़े की दवा के साथ नेब्लोन 50 ग्राम सुबह शाम पिलाएं तथा सल्फाडिमिडीन एक गोली प्रतिदिन तीन दिन तक खिलाएं। गायों को साफ–सुथरी जगह पर रखें। घास में धूप लग जाने के बाद गायों को चरने के लिए छोड़े। जल–जमाव वाले क्षेत्र की घास को बिना सुखाए न खिलाएं। बाक्षा–बाछी को ऐसी स्थिति में फेनूस ज्यादा खिलाए। रोगी मवेशी को नियमित रूप से कृमि की दवा तथा दस्तरोधक दवा की उचित खुराक दें।

थेलेरियोसिस

यह बीमारी चमोकन द्वारा फैलता है। इस बीमारी में शरीर के

किसी हिस्से में गिल्टी दिखाई देने लगती है। वह हिस्सा फूल जाता है। पेशाब पीली होने लगता है। गाय मरने के एक दो दिन पहले तक चारा खाती रहती है। ज्यादातर यह बीमारी संकर नस्ल की गायों में पाई जाती है। गाय की तुलना में बछड़े अधिक इस बीमारी से प्रभावित होते हैं। देशी नस्ल की गायों में यह बीमारी नहीं के बराबर होती है। इस बीमारी से गायों में मृत्यु दर 70 से 80 प्रतिशत होती है। जिस माह में चमोकन ज्यादा होता है, उस माह में इसका प्रकोप ज्यादा होता है। फरवरी से मई और जुलाई से अक्टूबर मे चमोकन की बढोत्तरी होती है। उपचार के लिए बुटालॉक्स 2.5 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शरी की एक सूई मांस में लगाना चाहिए। टेट्रासाइक्लीन या आक्सीटेट्रासाईक्लीन आदि का प्रयोग भी लाभकर होता है

खुरहा मुँहपका

यह विषाणु से होने वाली बीमारी है। हवा के द्वारा कीटाणु गाय के शरीर में फैल जाते हैं। इसका सबसे अधिक कुप्रभाव दूध पर पड़ता है मरने का खतरा कम रहता है। इसमें करीब 107 डिग्री फॉरनहाईट तक बुखार रहता है। जीभ पर छोटी–छोटी फंसिया होने के कारण छाले पड़ जाते हैं। फूंसी मसूढ़े में फैलती है। मुंह में फेन सहित लार निकलता है। खूर में घाव हो जाता है। दर्द के कारण गाय लंगड़ाकर चलती हैं बथान की सारी गायों को इसका टीका लगवाएं पहला टीका छह माह के बछा–बाछी को लगवाएं फिर छह महीने के बाद दूसरा टीका लगवाएं। इसके बाद हर साल यह टीका लगवाते रहें। आक्रान्त पशु को एम्पीसीलीन–क्लौक्सासीलीन, एमीकासीन, सेफ्ट्रीयाजोन समूह की दवाए शारीरिक भार के हिसाब से देना चाहिए। मुँह तथा पैर के घाव को 1 प्रतिशत पोटाशियम परमैगनेट के धोना चाहिए।

गलघोंटू

जिवाणु के कारण यह रोग फैलता है। पहली बरसात में हो यह बीमारी शुरू हो जाती है। इस समय जिवाणु का फैलाव तेजी से होता

है । इस बिमारी में गला और जीभ फूल जाते हैं । मुँह से लार टपकता रहता है। सांस लेने में भी कठिनाई होती हैं जिसके कारण गले से एक प्रकार की आवाज निकलती है । शरीर अधिक गर्म रहता है । कभी–कभी तो लक्षण दिखने के पहले ही गाय की मौत हो जाती है । हर साल बरसात आने के पहले सभी उम्र की गायों को इस बीमारी का टीका लगवा दें । यह टीका पशु–चिकित्सालय में लगाया जाता है । बीमारी हो जाने पर बेन्जाँइल पेंसिलीन 8000 से 50000 यूनिट प्रतिकिलो शरीर के वजन के अनुपात में शरीर में लगाएं । यह दवा दिन में दो बार तीन दिन तक लगाएं साथ में मेलोनेक्स 15 एम.एल. की सूई मांस में लगाएं । एमोक्सीलीन समूह की दवा भी करगर होती है ।

लंगड़ी/जहरबाद (बी.क्यू.)

यह रोग को अंग्रेजी में ब्लैक क्वार्टर (बी.क्यू.) या ब्लैक लेग कहा जाता है, क्योंकि शरीर के अगले वे पिछले पैरों एवं इसके उपरी भागों के मांसपेशियाँ काला पड़ जाती है । यह गोपशुओं का जीवाणु जनित (बैकटिरियल) तीब्र संक्रामक रोग है । यह रोग क्लॉसट्रीडियम सोवियाई नामक जीवाणु से उत्पन्न होता है । रोग के जिवाणु खान–पान द्वारा पशु के आंत में प्रवेश कर विष पैदा करते हैं, तथा रोग उत्पन्न करते हैं छः माह से दो वर्षो तक की उम्र वाले गो पशुओं में यह रोग ज्यादा फैलता है । रोग के शुरू में तेज बुखार हो जाता है । शरीर में रोग पुरी तहर फैल जाने के बाद रोगी पशु जमीन पर गिर जाते हैं । शरीर का तापमान सामान्य अथवा बिल्कुल कम हो जाता है । शरीर के सूजे हुए भागों पर दबाने से कड़कड़ाहट की आवाज पैदा होती है । इस रोग से पीड़ित सभी पशुओं की प्रायः मृत्यु हो जाती है ।

अढ़ेया बुखार

मुख्य रूप से यह बीमारी विषाणु के कारण होती है । दूध पर इसका बुरा असर पड़ता है । इस बिमारी में गाय प्रायः मरती तो नहीं है बल्कि बहुत तेज बुखार और खांसी होती है । पैर में लगातार दर्द रहने के

कारण लंगड़ाती रहती है । इससे बचने का कोई टीका नहीं है लेकिन बीमारी से राहत के लिए टेट्रासाइक्लिन 50 मिलीग्राम प्रतिकिलो वजन के हिसाब से सूई दी जाती है । ढ़ाई–तीन दिनों में बीमारी ठीक हो जाती है ।

सर्रा

यह बिमारी डांस नामक मक्खी के काटने से फेलती है । पूरे बथान की गायें इसका शिकर हो जाती है । यह बीमारी खून में फैलती है । इसका प्रभाव दो प्रकार से पड़ता है :– एक्यूट और क्रोनिक ।

एक्यूटसर्रा

इसमें गाय तेजी से दूध घटा देती हैं नीचे गिरकर छटपटाने लगती है या एक ही जगह पर चक्कर काटती रहती है और ढेंकी की तरह सि ऊपर–नीचे करती है । कभी गिरकर तुरंत खड़ी हो जाती है । अंत में जब असहाय हो जाती है तो गिरकर हाथ–पांव मारने लगती है तथा दांत कटकटाती है । इलाज के अभाव में गाय दो–तीन दिनों के अंदर मर जाती है ।

क्रोनिक सर्रा

इसके कारण गाय का खाना–पीना कम हो जाता है । थोड़ा–थोड़ा बुखार रहता है । धीरे–धीरे पशु कमजोर लगता है । हल्का बुखार, पेट फूलना, रोआँ खड़ा करना, थुथना जमीन पर रखे रहना, आँख पीला होना आदि प्रमुख लक्षण हैं । गाय को तेज धूप में चरने के लिए न छोड़े झाड़ियों में छिपी डांस मक्खियां तेज धूप में ही बाहर निकलकर गाय का खून चूसती है । इसलिए बथान के आसपास की झाड़ियों को साफ रखें । पशु चिकित्सक से मिलकर समय पर इसका इलाज करावें ।

लाल पेशाव (रेड वाटर)

यह बीमारी अठैल द्वारा फेलती है इसके कीटाणु खून में तेजी से बढ़ते है। जिससे लगातार तेज बुखार रहता है। पेशाब का रंग लाल होता हैं सांस तेज चलती है और भूख कम हो जाती है। प्रत्येक मवेशी को चार माह पर अठैल मारने की दवा लगाएं। अठैल के अंड़े बच्चे दीवार और जमीन में छूपे रहते हैं। इस जगहों में खास तौर से अठैल मारने की दवा का छिड़काव करे। गाय के शरीर को एक दो बार रगड़े बीमारी हो जाने पर जरूरत पड़ने पर पशु चिकित्सा से मिलकर तुरंत इलाज कराएं।

यकृत कृमि रोग (एल. एफ.)

यह बीमारी फेसियोला नामक परजीवी से फैलती है। इसके अंडे घोघें के पेट में चलते हैं और बाहर निकलकर नदी–तालाब के आसपास की हरी घास में फैल जाते है। पशु के चरने या यहां की घास खिलाने से यह बीमारी फेलती है। इस बीमारी में मवेशी को पतला और बदबूदार दस्त होता है। धीरे–धीरे भूख कम लगने लगती है। गाय कमजोर हो जाती है। पेट के निचले भाग तथा जबड़े के नीचे पानी भर जाता है और सूज जाता है। नदियों और तालाबों के आसपास की हरी घास न खिलाएं अगर खिलाना जरूरी हो तो धूप में सूखाकर मिलाएं। डिस्टोडीन की चार गोली खाली पेट में खिलाए भूख बढ़ाने वाली टॉनिक और पाचक खिलाएं। इस रोग में टोलजान एग फेंसीनेक्स आदि दवाएं भी कारगर हैं।

एम्फिस्टोमियासिस

इस बीमारी के कीटाणु भी एक प्रकार की कृमि के कारण होते है। यह भी नदी –नाले के किनारे वाले घास में फैल रहते हैं। किटाणु घोंघे में पाए जाते हैं। इसमें पतला पखाना होता है। एन्टीबायटिक से रोग रूकता नहीं है। बीमारी होने पर डिस्टोडिन की चार गोली खाली

पेट में खिलाएँ लीवर टॉनिक या कोई पाचक टॉनिक दें। पशु चिकित्सक से अवश्य दिखा दें।

गोल–कृमि

यह बीमारी ज्यादातर बछड़े में मिट्टी चाटनेवाली उम्र में होती है। खासकर मिट्टी के द्वारा कृमि पेट में चला जाता है। कभी–कभी गाय के पेट से ही यह बीमारी आती है। दूध के द्वारा भी यह बीमारी फैलती है। इस बीमारी में कब्ज बना रहता है और पतला दस्त होता है कभी–कभी गोबर द्वारा केंचुवा बाहर निकल आता है। ऐसी स्थिति में पीपराजीन दवा 30 मिली. बछड़े को पिलाएँ। एक महीने के अन्दर दूसरी खुराक दें।

थनैला

थनैला दुधारू पशुओं में होने वाला एक प्रमुख रोग है, जिसका प्रभाव डेरी उद्योग पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। आर्थिक दृष्टिकोण से इस रोग का बहुत ही महत्व है। जीवाणुओं का संक्रमण थनैला रोग का प्रमुख कारण है। गोपशुओं एवं भैंसों में यह रोग अधिकतर 'स्टैफाइलोकोकस' नामक जीवाणुओं के कारण होता है। थनैला रोग उत्पन्न करने में थन में लगने वाली चोटों और घावों का भी बहुत अधिक महत्व होता है, क्योकि थानों में संक्रमण इन घावों का भी बहुत अधिक महत्व होता है, क्योंकि थानों में संक्रमण इन घावों या चोटों से प्रारंभ होता है। कई बार नवजात बछड़े, दुध पीते समय थन में घाव उत्पन्न कर देते है, जिससे जीवाणुओं का आक्रमण होने के कारण थनैला रोग उत्पन्न हो जाता है। दूध निकालने वाले मशीन के कपों, ग्वालों के दूषित हाथों और पशुशालाओं व दुग्धशालाओं के गंदे वर्त्तनों से भी संक्रमण का फैलाव का फैलाव होता है।

रोग के लक्षण

थनैला रोग के लक्षण दिखते ही तुरंत उपचार शुरूकर दें,

इसके लिये अपने पशुचिकित्सक से शीघ्र संपर्क करें। थनैला रोग के जीवाणु के विरूद्ध सबसे कारगर एंटीबाओटिक दवाईयाँ 'आम्पीसिलीन', 'एमौक्सीसिलीन' जेंनटामाइसीन एवं '' एनरोफ्लोक्सासीन'' है। इन दवाईयों कुछ कंपनियों द्वारा निर्मित विभिन्न नामों से बाजार में बेचे जाते हैं। 'आम्पीसिलीन' एवं 'क्लोक्सासिलीन' दवाईयाँ प्लास्टीक सिरिंज में बाजार में मिलता है, इसे सीधे छीमी के रास्ते से थन में चढ़ाया जाता है। थन में लगाने के लिये एक मलहम भी बाजार में मिलता है, जिसका उपयोग करें। सहायक चिकित्सा के रूप एंटीबाओटिक औषधी के साथ ''लेवामिजोल'' का एक सूई लगाया जाता है, जिससे थनैला रोग के जीवाणुओं के विरूद्ध जानवरों में प्रतिरोधक शक्ति पैदा होती है। सहायक चिकित्सा के लिये विटामिन ए., सी., ई एवं सेलिनियम का भी उपयोग सूई द्वारा किया जाता है जो कि थनैला रोग में काफी फायदेमंद होता है। विटामिन ई और सेलेनियम के मिश्रण का सूई बाजार में बिकता है, जिसका उपयोग थनैला रोग में किया जाता है। विशेष स्थिति में पशुचिकित्सक का सलाह अनिवार्य है।

दुग्ध–ज्वर (मिल्क फीवर)

बछड़ा देने के 49 घंटे के बाद यह बीमारी हो सकती है। फेनुस की पूरी मात्रा दूह लेने पर आहार में कैल्शियम की कमी होने पर यह बीमारी हो जाती है। ज्यादातर दो–ती बियान वाली गाय में यह बीमारी होती है। शुरू में उठती नहीं है यह पैर पटकती है और बाद में सुस्त हो जाती है। सिर मोड़कर बैठती है। खाना और पागुर भी बंद कर देती है। शरीर का तापमान 100 डिग्री फारेनहाइट रहता है। यही समय पर इलाज नहीं करने से लकवा मार देता है। अंत में गाय मर जाती है। निदान के लिए चिकित्सक के सलाह पर अन्त :शिर विधि से कैल्शियम की सूई लगना चाहिए।